चतुर्थ अध्याय
यशपाल के उपन्यासों में स्त्री की पारिवारिक स्थिति

परिवार एक अनादि संस्था है। इसकी सदस्यता प्रत्येक सदस्य के लिये अनिवार्य होती है। परिवार, माता-पिता, दादी-दादा, चाचा-ताऊ आदि संबंधियों का एक चित्र प्रस्तुत करता है। देश, काल तथा परिस्थिति ने परिवार के स्वरूप में परिवर्तन किये हैं, इनमें चाहे जितने परिवर्तन हो जायें किन्तु यह एक आधारभूत इकाई के रूप में समाज का संचालन कर रहा है। इसके आधार, पारस्परिक संबंध तथा गुणों (दया, प्रेम, सहयोग, ममता आदि) के द्वारा इसका स्थायित्व बना हुआ है।

परिवार की रचना पति-पत्नी, बच्चों से होती है। इसके रूप भिन्न-भिन्न होते हैं। ये सभी रूप अपने सदस्यों को सामान्य घरेलू शिक्षा देते हैं, उनमें अनेक वैयक्तिक तथा सामाजिक गुणों का विकास करते हैं।

बरगस एवं लॉक के अनुसार - "परिवार व्यक्तियों का वह समूह है जो विवाह, रक्त संबंध, दत्तक सम्बन्धों के द्वारा एक गृहस्थी का निर्माण करते हैं, उनमें वे माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री के संबंधों का निर्माण करके एक संस्कृति को जन्म देते हैं।"[106]

मैकाइवर के अनुसार - "परिवार वह समूह है, जिसमें यौन संबंध निश्चित होते हैं और उनमें सहवास, सन्तानोत्पत्ति तथा उनका पालन-पोषण होता है।"[107]

परिवार एक विश्वव्यापी संस्था है। इसके अभाव में विश्व की किसी भी संस्था का अस्तित्व नहीं रह सकता। परिवार की निम्न विशेषताएँ होती हैं -

---

106 सुरेश भटनागर - पारिवारिक संबंधों का विकास, पृ. 363

107 सुरेश भटनागर - पारिवारिक संबंधों का विकास, पृ. 366

1. **सार्वभौमिकता** – विश्व के सभी समाजों में जहां नर–नारी रहते हैं, परिवार का अस्तित्व है। संसार में सभी विकसित व अविकसित समाजों में परिवार के दर्शन होते हैं। इसकी सत्ता विश्वव्यापी है।

2. **भावना की प्रधानता** – भावना एक भक्ति के रूप में क्रियाशील होती है और परिवार के सभी सदस्यों को एक–दूसरे से बांधे रहती है। प्रेम, सेवा, त्याग, बलिदान की भावना परिवार को आपस में बांधे रहती है।

3. **सीमित आकार** – समाज की परम्पराओं के अनुसार प्रत्येक समाज का आकार सीमित होता है। कहीं पर एकल परिवार पाये जाते हैं, जिनमें माता–पिता तथा बच्चे सम्मिलित होते हैं एवं कहीं पर संयुक्त परिवार पाये जाते हैं, जिनमें माता–पिता, दादा–दादी, चाचा, ताऊ और उनके परिवार आदि होते हैं।

4. **समाज का केन्द्र** – परिवार समाज का केन्द्र होता है। समाज के सभी संगठन परिवार के इर्द–गिर्द घूमते हैं। अरस्तु ने इसलिये कई परिवारों के समूह को समुदाय की संज्ञा दी है। आरम्भिक समाजों में परिवार ही समस्त सामाजिक, धार्मिक क्रियाओं का केन्द्र था। आज भी परिवार की क्रियायें समाज का केन्द्र बिन्दु है।

5. **सदस्यों का दायित्व** – परिवार में सभी सदस्यों का अपना–अपना दायित्व होता है, जिसका निर्वाह उन्हें करना पड़ता है। बच्चे, माता–पिता की आज्ञा का पालन करते हैं, माता–पिता, बच्चों का उचित पालन–पोषण करते हैं और उनके विकास के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। पति–पत्नी परिवार का संचालन करते हैं।

6. **पारिवारिक विधान** – प्रत्येक परिवार की अपनी रीतियां तथा परम्परायें होती हैं जो परिवार के सदस्यों को मान्य होती हैं। इन रीतियों तथा रिवाजों का पालन करने से ही परिवार के किसी कार्य को मान्यता मिलती है।

पारिवारिक संस्कारों के समय रीति-रिवाज ही उन्हें नियमितता प्रदान करते हैं।

7. **स्थायित्व-अस्थायित्व** - परिवार में स्थायित्व तभी रहता है जबकि उसके सभी कारकों में सन्तुलन बना रहे। परिवार में जब कभी सामाजिक, आर्थिक एवं प्राणी शास्त्रीय असंतुलन होता है तो परिवार टूटने लगता है तथा यह अस्थायित्व पारिवारिक कलह, तलाक, पृथकता आदि का रूप धारण कर लेता है। जब तक पति-पत्नी एक समान भावना से रहते हैं तब तक परिवार में स्थायित्व रहता है अन्यथा परिवार टूट जाता है।

विश्व में परिवारों का एक स्वरूप नहीं पाया जाता, इनके स्वरूप में अन्तर रहता है। समाजों की स्थिति के अनुसार विश्व में निम्नानुसार परिवार पाये जाते हैं-

(1) **मातृ प्रधान परिवार** - मातृ प्रधान परिवारों से परिवार का नाम तथा वंश माता के नाम से चलता है। परिवार की समस्त सम्पत्ति का अधिकार माता को होता है। ऐसे परिवारों में पुरूष की स्थिति नारी की अपेक्षा निम्न होती है। वे समय-समय पर ससुराल आते रहते हैं। लड़की पतिगृह में नहीं रहती, अपितु अपनी माता के पास रहती है। इस प्रकार के परिवार को समान रूधिर परिवार भी कहते हैं। इसमें लड़की अपने समान रूधिर वाले व्यक्तियों में ही रहती है।

(2) **पितृ प्रधान परिवार** - ये परिवार मातृ प्रधान परिवारों के विपरीत होते हैं। इस प्रकार के परिवारों में पत्नी, पतिगृह में रहती है। सम्पत्ति पर पिता का अधिकार रहता है। स्त्री की सामाजिक स्थिति पुरूष की अपेक्षा निम्न होती है। वंश पिता के नाम से चलता है।

(3) **एक विवाही परिवार** - माता तथा पिता पृधान परिवारों में एक विवाही परिवार पाये जाते हैं। इनमें एक विवाह प्रथा प्रचलित होती है। भारत में एक विवाही परिवारों की संख्या अधिक है।

(4) **बहुविवाही परिवार** - भारत में ऐसे परिवार भी पाये गये हैं जहां एक से अधिक विवाह किये जाते हैं। बहु-पति विवाह, बहु-पत्नी विवाह, समूह विवाह के रूप में ऐसे परिवार पाये जाते हैं। समूह विवाह में एक स्त्री का संबंध अनेक पुरूषों से होता है और सन्तान समूह की मानी जाती है।

(5) **पृथक परिवार** - इस प्रकार का परिवार एक विवाही होता है। इसमें माता-पिता तथा बच्चे ही होते हैं। वयस्क होने पर बच्चे अपना परिवार पृथक बना लेते हैं।

(6) **संयुक्त परिवार** - संयुक्त परिवार में माता-पिता, बच्चे तो रहते ही हैं, साथ ही उनके पितामह, चाचा-ताऊ आदि भी रहते हैं। ऐसे परिवारों में सम्पत्ति सामूहिक होती है और परिवार का मुखिया उस सम्पत्ति का प्रबन्ध करता है। परिवार के मुखिया की सहमति से ही सारे कार्य होते हैं। विवाह आदि उसी की इच्छा से सम्पन्न किये जाते हैं। संयुक्त परिवार कृषि प्रधान देशों में पाये जाते हैं।

स्त्री का जीवन इतना संकीर्ण नहीं है कि वह वैवाहिक दाम्पत्य जीवन के सीमित घेरे में समाप्त हो। अत: स्वाभाविक है कि स्त्री के वैवाहिक जीवन की समस्याओं की तरह उसे जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। नारी हो या पुरूष उनका जीवन सिर्फ दम्पत्ति के घेरे में ही सीमित नहीं होता है। वे सिर्फ पति-पत्नी की तरह ही नहीं रह सकते हैं। स्त्री का जीवन अपने पति के तथा अपने स्वयं के परिवार से भी संबंधित होता है। पुरूष के भी माता-पिता होते हैं, भाई-बहन होते हैं, चाचा होते हैं, मामा होते हैं, मौसी होती है, आदि रिश्तेदार होते हैं, ऐसे समाज में पुरूष या स्त्री को रहना होता है। इसी समाज को परिवार कहा जाता है। परिवार के घेरे में रहते हुए पति-पत्नी या स्त्री-पुरूष को जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। स्त्री को इन समस्याओं का पुरूष की अपेक्षा अधिक सामना करना पड़ता है और ये समस्याएँ अथवा कठिनाइयाँ उसके जीवन को अधिक प्रभावित करती हैं।

स्त्री की जीवन अपने पति के साथ ही सीमित नहीं होता, पति तथा अपने परिवार से भी संबंध होता है। ससुराल में आकर स्त्री के जीवन में पारिवारिक

समस्याओं का प्रवेश होता है। पारिवारिक रिश्ते निभाते हुए उसे तरह-तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। एक समय था जब परिवार के सभी सदस्य साथ-साथ रहते थे, इसी से स्त्री को संयुक्त परिवार में समस्याओं का सामना करना पड़ता था। हमारे समाज में परिवार दो प्रकार के हैं - संयुक्त परिवार तथा विभक्त परिवार।

(अ) संयुक्त परिवार -

समाज के विकास में संयुक्त परिवार का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, माता-पिता, चाचा-चाची, पुत्र-पौत्र आदि अनेक सदस्य एक साथ रहते हैं। ऐसे संयुक्त परिवार में सब सदस्यों को अनुशासन और एकता की भावना से रहना होता है। परिवार का मुखिया परिवार की आमदनी जायदाद आदि की व्यवस्था देखता है, लेकिन अब जबकि परिवार का प्रत्येक सदस्य उस कड़ी को अपनी वृद्धि के अनुसार जोड़ने का प्रयत्न करता है तो उसके विचार तथा बुद्धि अलग-अलग होने के कारण वह कड़ियाँ आपस में टकराने लगती हैं और उनकी आवाज घर से बाहर तक जाने लगती है जो कि परिवार के हर सदस्य के लिए असहनीय है। इसका परिणाम यत होता है कि वह एक-एक कड़ी अलग-अलग हो जाती है। आज के युग में जहाँ एकता, नि:स्वार्थ भावना नहीं वहाँ संयुक्त परिवार सफल नहीं हो सकते।

आज के संघर्षशील जीवन में परिवार विघटित हो चुका है। मनुष्य में स्वार्थ की भावना सर्वोपरि है। आपसी प्रेम के संबंध क्षीण पड़ते जा रहे हैं। यदि ऐसे समय में व्यक्ति संयुक्त परिवार में रहता है तो पारिवारिक सदस्यों में आपसी टकराहट होती रहती है। भिन्न-भिन्न स्वभाव और प्रकृति के पारिवारिक सदस्यों के कारण संयुक्त परिवारों का वातावरण सौहार्दपूर्ण नहीं रहने पाता। ऐसे परिवारों में कभी-कभी आर्थिक शोषण भी होता रहता है। परिवार में कमाने वाले व्यक्तियों की आमदनी एक-सी नहीं होती परन्तु खर्चा सबके लिए एक समान होता है। इसलिए कमाने वाले व्यक्ति पर परिवार का बोझ अधिक पड़ जाता है। आज संयुक्त परिवार प्रथा में लोगों का विश्वास उठता जा रहा है। इन बातों को दृष्टि

में रखते हुए डॉ. पारसनाथ मिश्र का कथन है – "अनेक कारणों से सामन्ती युग में संयुक्त परिवार भारतीय समाज व्यवस्था का मेरूदण्ड था। इसके मूल में कृषि प्रधान आर्थिक व्यवस्था थी, परन्तु पूँजीवादी युग आर्थिक वैषम्य ने संयुक्त परिवार को विघटित कर दिया। आज परम्परागत भारतीय परिवार छिन्न-भिन्न हो रहा है।"[108] इसी कारण आज के युग में संयुक्त परिवार में रहना असम्भव है। स्वार्थवृत्ति के कारण कोई किसी का साथ नहीं देता।

समय के अनुसार जर्जरीत होती संयुक्त परिवार प्रथा का उल्लेख यशपाल जी ने अपने उपन्यासों में किया है। 'देशद्रोही', 'मनुष्य के रूप' और 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यासों में इस प्रथा का वर्तमान विकृत, जर्जरीत स्वरूप दिखायी देता है।

'देशद्रोही' उपन्यास की राज पढ़ी-लिखी है और 'मनुष्य के रूप' की सोमा जो अनपढ़ है, दोनों को ही विधवा हो जाने के बाद संयुक्त परिवार के अत्याचारों का सामना करना पड़ता है।

'देशद्रोही' और 'मनुष्य के रूप' दोनों ही उपन्यासों में संयुक्त परिवार की जर्जर स्थिति का चित्रण है। समय के अनुसार मानवीय संवेदनाएँ परिवर्तित हो जाती हैं। आज पैसे ने मनुष्य को इतना स्वार्थी बना दिया है कि भाई-भाई के प्रेम को भूल गया है। मानवीय मूल्यों का ह्रास हो गया है। प्रेम, सहानुभूति, समर्पण संयुक्त परिवार के ये आदर्श, मूल्य समाप्त हो गये हैं। 'देशद्रोही' उपन्यास का ईश्वरदास चाहता है कि उसका भाई सुरक्षित न लौटे ताकि वह अकेला ही सारी सम्पत्ति का मालिक बन सके। संयुक्त परिवार की प्रेम भावना खोखली और अस्थिर बनती जा रही है।

'देशद्रोही' उपन्यास में संयुक्त परिवार का जर्जर रूप ही दिखाई देता है। विधवा राज को परिवार के लोगों की भली-बुरी सुननी पड़ती है। विधवा हो जाने पर राज का ससुराल में दम घुटता था, क्योंकि पति के होते हुए जो प्यार और सम्मान उस घर में मिलता था वह पति के बाद नहीं रहा। उसके घर से बाहर

---

[108] डॉ. पारसनाथ मिश्र – मार्क्सवाद और उपन्यासकार यशपाल, पृ. 101

जाने पर बुआ और भौजाई उसे सुना-सुनाकर कहती थीं - "इस घर की बहुओं ने कभी अकेले गली में कदम न रखा था। यह अच्छी सुलच्छनी आई है कि दुनिया में खानदान का नाम रोशन कर दिया।"[109] इन सब बातों ने उसे घर छोड़ने के लिए बाध्य कर दिया था "क्योंकि सेवा और सुयश का फल उसने चख लिया था।"[110] इन छोटी-छोटी बातों के अलावा इस संयुक्त परिवार के कारण राज के साथ बड़ा अत्याचार हुआ। जब भगवानदास खन्ना को वजीरीस्तान के लुटेरों ने कैद किया तो खन्ना बड़े विश्वास के साथ अपने बड़े भाई ईश्वरदास को रूपये भेजने के लिए लिखता है परन्तु स्वार्थवृत्ति के कारण वह रूपये नहीं भेजता क्योंकि वह अपने छोटे भाई की सम्पत्ति भी हड़पना चाहता है। वह सोचता है कि अगर वह जीवित लौट आया तो उसके हाथ कुछ न लगेगा। जब खन्ना को मित्र के द्वारा विदित हुआ कि उसने लाला ईश्वरदास खन्ना को रजिस्ट्री करके पत्र भेज दिया था तो डॉ. खन्ना को विश्वास हो गया कि "बड़े भाई की उदासीनता का कारण पारिवारिक सम्पत्ति का लोभ ही है।"[111]

संयुक्त परिवार में भाई-भाई के बीच प्रेम होता है, परन्तु 'देशद्रोही' उपन्यास में इस भातृप्रेम को खोखला बताया है। इस प्रकार 'देशद्रोही' उपन्यास से ज्ञात होता है कि संयुक्त परिवारों में प्रेम केवल दिखावा है, उसका स्वरूप अस्थिर है। परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ प्रेम का स्वरूप भी परिवर्तित हो जाता है। यशपाल जी ने इसे स्पष्ट किया है - "नये ढंग की पढ़ी-लिखी बहू के घर आने से, लक्ष्मी के चरण पड़ने के कारण वह लाला ईश्वरदास की दृष्टि में सुलक्षणा, लक्ष्मी और लाडली बन गई थी। सास के आसन की अधिकारी बुआ और जेठानी उसे कुछ न कह सकती थीं, परन्तु कुलक्षणा विधवा बन जाने पर वही बहू बोझ बन गई।"[112] इस प्रकार संयुक्त परिवार में द्वेष, कलह व संघर्ष का वातावरण बना रहता है। अगर ईश्वरदास खन्ना रूपयों के प्रति उदासी न

---

109 यशपाल - देशद्रोही, पृ. 46

110 यशपाल - देशद्रोही, पृ. 89

111 यशपाल - देशद्रोही, पृ. 53

112 यशपाल - देशद्रोही, पृ. 39

दिखाते तो भगवानदास खन्ना वापिस लौट सकते थे और उनका बसा-बसाया घर भी न उजड़ता।

'मनुष्य के रूप' में संयुक्त परिवार की विकृतियों का चित्रण हुआ है। यशपाल जी संयुक्त परिवार की विसंगतियों का चित्रण करते हैं। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास की सोमा जो निम्न जाति के संयुक्त परिवार की सदस्या है, विधवा हो जाने के बाद उसकी स्थिति दयनीय हो जाती है। पति की मृत्यु के बाद सोमा को यह परिवार बोझ समझता है और उसके साथ दुर्व्यवहार करने में कोई कसर नहीं छोड़ता। घर के सभी सदस्यों का काम करने के बाद भी सब उस नि:सहाय पर रौब जमाते हैं। इतने सब सदस्यों के घर में होते हुए भी वह बेसहारा बन जाती है। यहाँ तक कि सास उसे बोझ समझती है और उसे बेचना चाहती है। सास कहती है - "सच पूछो तो मेरा तो कलेजा काँपता रहता है। वह है भी तो संडी की संडी। मैं तो कहती हूँ, मायके ही जा मरे। यहाँ अपनों का ही पेट नहीं भरता।"[113] यशपाल जी यहाँ यह कहना चाहते हैं कि मुसीबत के समय काम न आ सके ऐसे संयुक्त परिवार का अर्थ ही क्या?

ऐसी दशा में देवरानियों तथा जेठानियों का भी आपस में प्यार नहीं होता बल्कि जलन की भावना आ जाती है। जब सोमा को बेचने की युक्ति सोची गई तो घर में सबसे कहा गया कि इसे बाप ने बुलाया है क्योंकि वह जग (यज्ञ) कर रहा है तो मंझली जेठानी जल-भुन जाती है - "हमें तो मायके का आँगन देखे दो बरस हो गये। वही बड़ी सुलच्छनी है न।"[114]

इसी उपन्यास में संयुक्त परिवार का एक अन्य रूप सेठ ज्वाला सहाय के संयुक्त परिवार द्वारा चित्रित हुआ है। घर में बच्चे के नामकरण के प्रसंग पर मनोरमा सबके लिए एक जैसी साड़ियाँ खरीदकर ले आती है। सोमा के लिए भी वैसी ही साड़ी खरीदकर लाती है तब बड़ी भाभी के अहं को चोट पहुँचती है। उसे लगता है उसका पति कमाता है, वह बड़ी है, धनी मानी पति की पत्नी है

---

113 यशपाल - मनुष्य के रूप, पृ. 43

114 यशपाल - मनुष्य के रूप, पृ. 46

पर उसका सम्मान नहीं किया जा रहा। वह कहती है - "मैं क्या तुम्हारी नौकरानी हूँ? तुम मेरे लिए और अपनी नौकरानी के लिए एक जैसी साड़ी लाए हो।"[115] इस तरह संयुक्त परिवार में छोटे-बड़ों के मान-अपमान का ख्याल न रखने पर विषम परिस्थिति पैदा हो जाती है।

इस प्रकार संयुक्त परिवार में प्रेम तथा भावना का आधार धन होता है। अगर धनी मानी संयुक्त परिवार है तो घर के बड़े-बूढ़ों की चलती है। किसी के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता तभी संयुक्त परिवार सफल हो सकता है, परन्तु आजकल तो संयुक्त परिवार असम्भव है क्योंकि परिवार के सब सदस्य अपनी-अपनी मर्जी से काम करते हैं। इसलिए संयुक्त परिवार से कठिनाई आती है।

'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में भी विधवा गौरी के साथ संयुक्त परिवार में दुर्व्यवहार किया गया था। आज संयुक्त परिवार विघटित हो गये हैं क्योंकि परिवार के सदस्यों में एकता की भावना का अभाव है। एम-दूसरे के प्रति विश्वास, नि:स्वार्थ वृत्ति, सहनशीलता आदि का अभाव है। उनके विघटन का कारण आर्थिक वैषम्य भी है। इस युग के अनुसार यशपाल जी ने भी सफल संयुक्त परिवार की संभावना नहीं की। संयुक्त परिवारों में नारी की भावनाओं को कुचला ही जाता है। इसी बात का चित्रण यशपाल जी के उपन्यासों में मिलता है।

(ब) परिवार विघटन -

"आधुनिक शिक्षा पद्धति का यह सबसे बड़ा दोष है कि उसने शिक्षितों में सफेदपोशी की प्रवृत्ति जगाई।"[116] पूर्व में अशिक्षित व्यक्ति एक साथ मिलकर काम निबटा लिया करते थे और जैसे-तैसे गुजारा कर लेते थे। परन्तु अभी अशिक्षा की प्रगति के कारण परम्परागत भारतीय संयुक्त परिवार छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। सफेदपोशी के कारण उन्हें खेतों में काम करना पसन्द नहीं, जिस कारण परिवार

---

115 यशपाल - मनुष्य के रूप, पृ. 180

116 डॉ. पारसनाथ मिश्र - मार्क्सवाद और उपन्यासकार यशपाल, पृ. 101

के सदस्य पढ़-लिखकर नौकरी की तलाश में भिन्न-भिन्न स्थानों पर चले जाते हैं और संयुक्त परिवार के सदस्य तितर-बितर हो जाते हैं।

मानव में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का विकास हो गया है। जहाँ बड़े परिवार को महानता दी जाती थी वहाँ अब छोटे परिवार को महत्त्व दिया जाता है। इसी कारण आधुनिक परिवार इतना छोटा हो गया है कि उसमें केवल पति-पत्नी तथा बच्चे ही होते हैं और किसी अन्य व्यक्ति के लिए उसमें स्थान नहीं।

संयुक्त परिवार के विघटन का सबसे बड़ा कारण है एकता की भावना का अभाव। आधुनिक युग में परिवार के सदस्यों में एकता की भावना, एक-दूसरे के प्रति विश्वास, सहनशीलता तथा नि:स्वार्थ वृत्ति का अभाव है। इन सब गुणों की कल्पना करना भी इस युग में नादानी है। यही कारण है कि संयुक्त परिवार टूटते हुए नजर आते हैं। अभी भी मध्यवर्गीय परिवारों में कुछ संयुक्त परिवार दिखाई देते हैं तथा गाँव में अभी तक परिवार के सदस्यों में एकता की भावना पाई जाती है, लेकिन आधुनिक युग में यह गुण उपेक्षणीय माना जाता है जिस कारण यशपाल भी एक सफल संयुक्त परिवार की संभावना नहीं करते।

वास्तव में एक हद तक यह उचित भी है क्योंकि संयुक्त परिवार में स्त्री की भावनाओं को कुचला जाता है। उनकी हर बात का निर्णय बड़े-बूढ़ों के हाथों में होता है, चाहे वह उसे खुशी से स्वीकार करें अथवा रो-रोकर। अगर किसी पुरूष की पत्नी बोझ है तो उसकी बड़ी दुर्गति होती है। हर तरफ से उस पर तानों की बौछार की जाती है। इसके अलावा यह अंधी दुनिया यह भी नहीं देखती कि उसमें उस दुखिया स्त्री का कसूर है या उनके बेटे उस पुरूष का। ऐसी अवस्था में उसका जीना दूभर हो जाता है।

परिवार विघटन का मुख्य कारण है आर्थिक विषमता। परिवार के सब सदस्यों के अलग-अलग काम होने से धन का उपयुक्त उपयोग तथा बँटवारा एक समान नहीं होता जिससे आपस में कलह, द्वेष की प्रवृत्ति घर कर लेती है। अगर परिवार के एक सदस्य की सब इच्छाओं की पूर्ति हो और दूसरा मुँह ताकता रहे,

तो भला उसे कहाँ से सुख और चैन मिलेगा। बड़े-बड़े शहरों में जगह की कमी के कारण तथा अलग-अलग व्यवसाय अपना लेने के कारण भी परिवार छिन्न-भिन्न हो गये हैं। परिवार के बड़े-बूढ़ों में भी उतना साहस नहीं रहा कि वह परिवार की बागडोर को अपने हाथों में संभालें, अगर सम्भालने की हिम्मत भी रखेंगे तो आर्थिक विषमता के कारण न्याय नहीं होगा।

इन सब कारणों के अतिरिक्त पारिवारिक विघटन का एक मुख्य कारण है आधुनिक सभ्यता। ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता गया, स्वाभाविक रूप से पारिवारिक विघटन भी होता रहा।

अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के कारण तथा हमारे ऊपर जो पाश्चात्य देशों का प्रभाव पड़ा है, इसके फलस्वरूप भी आज कुछ लोग व्यक्ति स्वातंत्र्य की इस धुन में अकेले रहना अधिक पसन्द करते हैं।

आधुनिक युग में मानव जीवन के सभी पक्षों में परिवर्तन छुपा हुआ है और परिवार भी उसी मानव जीवन की या समाज की आधारभूत इकाई है। जब आधुनिक सभ्यता के फलस्वरूप मानव जीवन का प्रत्येक अंग बदल गया है या बदल रहा है तो यह कैसे संभव हो सकता है कि उसी समाज का आधारभूत अंग यानि कि परिवार का रूप अपरिवर्तित रह जाए। इसलिए परिवार में भी परिवर्तन हुए हैं तथा हो रहे हैं। आधुनिक सभ्यता के प्रभावों के कारण परिवार भी नवीन सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों में अपने आपको ढालने का प्रयत्न कर रहा है।

सारांश में यह कहा जा सकता है कि आज तो संयुक्त परिवार का रूप ही बदल गया है। पुराने जमाने में संयुक्त परिवार का आधार धन था। जो घर का मुखिया कहता था वही होता था क्योंकि उसके हाथों में धन होता था। आज भी संयुक्त परिवार में धन कमाने वालों की संख्या अधिक होती है और उसकी शक्ति या अधिकार धन कमाने वालों में बँटी होती है। आज के परिवार में यह आवश्यक नहीं है कि संयुक्त परिवार का मुखिया आयु में भी सबसे बड़ा हो। अगर एक बेटा अच्छा कमाता है और माता-पिता अपनी वृद्धावस्था में उसके पास

जाकर रहते हैं तो उस रूप में वह संयुक्त परिवार अवश्य होगा, लेकिन वास्तविक अधिकार-सत्ता बेटे के हाथों में ही होगी। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन हिन्दू संयुक्त परिवार विघटित नहीं हुआ बल्कि उसका स्वरूप बदल गया है। आज का विभक्त परिवार आज के सामाजिक वातावरण की विवशता या देन है और आर्थिक परिस्थितियाँ इसके लिए जिम्मेदार हैं। न केवल पिता-पुत्र अलग-अलग रहने के लिए विवश हैं, बल्कि पति-पत्नी को भी यदि वह राजकीय सेवा में हैं तो अलग-अलग रहना पड़ता है।

विभक्त परिवार का एक मुख्य कारण यह भी है कि महिला-वर्ग में बढ़ती हुई शिक्षा। शिक्षा महिलाओं को आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए प्रेरणा देती है जिसके कारण संयुक्त परिवार केवल कल्पना की ही वस्तु रह जाता है क्योंकि आज का शिक्षित युवा-वर्ग किसी भी अनुशासन को मानने के लिए तैयार नहीं है। वह केवल अपने अधिकारों की बात करते हैं और कर्त्तव्य के प्रति बिल्कुल उदासीन है। यद्यपि शिक्षित होने के नाते उनसे यह आशा की जाती है कि वह अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने दायित्वों को भी समझें। वास्तव में दायित्वहीन व्यक्ति न केवल अपने परिवार को ही हानि पहुँचाता है, बल्कि अन्ततः समाज का भी अनिष्ट करता है।

जिस प्रकार 'देशद्रोही' की राज शिक्षित होते हुए भी यदि अपने पारिवारिक, आर्थिक दायित्व को पूरा करती और अपने परिवार की आर्थिक दशा सुधारने में योगदान देती तो शायद उस परिवार की कहानी कुछ और ही होती।

(स) कुमारी माता -

किसी कारणवश समाज में कुछ युवतियों को बिना विवाह के रहना पड़ता है। कभी स्वरूप की कमी के कारण, कभी कैरियर के मोह के कारण या कभी पारिवारिक उत्तरदायित्व को निभाने के लिए युवतियाँ कुँआरी रहना पसन्द करती हैं अथवा कुँआरी रहने पर विवश हो जाती हैं। ऐसी अवस्था में कभी-कभी प्रकृतिदत्त प्रवृत्तियों के कारण वह पुरूष के समागम से स्वयं को बचा नहीं पाती। संयोगवश इस प्रकार की कुँआरी महिला अगर गर्भवती हुई तो उसकी स्थिति

अत्यंत शोचनीय बन जाती है। हमारे समाज में संतानोत्पत्ति का केवल विवाहित नारियों को ही अधिकार है। यदि कोई कुँआरी लड़की गर्भवती हो जाती है तो उसे परिवार से निकाल दिया जाता है। समाज से, बिरादरी से बहिष्कृत कर दिया जाता है। इसमें लड़के का चाहे पूरा दोष क्यों न हो किन्तु दोषी लड़की ही ठहराई जाती है। उसे कुल-कलंकिनी के नाम से दुतकारा जाता है। हर तरफ से ठुकराई हुई नारी के सम्मुख जो समस्याएँ आती हैं, उनका चित्रण यशपाल जी ने अपने उपन्यासों में किया है।

अवैध संतान धारण करने पर कुमारी माता की समस्या नारी जीवन के लिए गम्भीर समस्या बनकर रह जाती है। यौन सम्बन्धों में स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण रखने वाले यशपाल आवश्यकतानुसार गर्भपात का भी समर्थन करते हैं। इस समस्या का समाधान अकेले नारी को ही करना पड़ता है, "पुरूष तो हाथ झाड़कर, सिगरेट पीता हुआ चल देता है परन्तु स्त्री मुसीबत में पड़ जाती है। ... वह क्या करे।"[117]

किसी भी कारणवश एक बार पतित, पथ-भ्रष्ट हो जाने वाली नारी को समाज में सम्मानित दृष्टि से नहीं देखा जाता। पुरूष नैतिक दृष्टि से कितना भी पतित क्यों न हो वह समाज का तथा परिवार का स्थायी सदस्य बना रहता है। इसके विपरीत नारी की अज्ञानता तथा विवशता के कारण और पुरूष द्वारा किए गए इस पतित व्यवहार के कारण, पुरूष सत्ताक समाज ही उसे अपने समाज से बहिष्कृत कर देता है। इसके अतिरिक्त उसके अपने परिवार के सदस्य भी उसे कुल-कलंकिनी मानकर उसका मुँह तक नहीं देखना चाहते। प्रकृति का विधान भी न्यारा है, वह भी निरीह नारी को ही इसका दण्ड देती है पुरूष को नहीं। इस अपमान से छुटकारा पाने के लिए उसके सम्मुख केवल दो ही रास्ते हैं - आत्महत्या या शरीर का व्यापार (वेश्यावृत्ति अपनाना)। अगर वह इस अपमान को सहकर बच्चे को जन्म देती है तो उस अवैध संतान का स्वागत करने के लिए समाज तैयार नहीं होता। यशपाल ऐसे अबोध शिशु को समाज में लाना ही अन्याय समझते हैं। जिस प्रकार काम को यशपाल ने अनिवार्य बताया है उसी

---

117 यशपाल - दादा कामरेड, पृ. 138

प्रकार गर्भ-निवारण भी अनिवार्य है। उनका कहना है - "जिस संतान का स्वागत करने के लिए परिस्थितियाँ न हों, उसे संसार में लाना ही अन्याय है।"[118]

'दादा कामरेड' उपन्यास में राबर्ट के माध्यम से यशपाल का कहना है - "जब प्रकृति तीव्र इच्छा उत्पन्न करती है तो उसे रोकना प्रकृति-विरूद्ध है या नहीं? और जिन जीवों के लिए समाज में स्थान नहीं, उन्हें पैदा कर देना भी प्रकृति विरूद्ध है या नहीं .....?"[119]

यशपाल जी एक ओर काम-भाव को प्राकृतिक तथा स्वाभाविक मानते हैं जिससे नारी का गर्भ धारण नामुमकिन नहीं, लेकिन उस जीव को संसार में लाकर उसकी तथा उसकी जन्मदात्री की हत्या करने संबंधी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसलिए यशपाल इस बात पर आग्रह करते हैं कि संतान को समाज में लाने से पहले विवेकपूर्ण विचार कर लेना चाहिए कि उसके विकास की परिस्थितियाँ अनुकूल हैं या नहीं? अगर ऐसा नहीं है तो माता-पिता बच्चे के प्रति अन्याय कर रहे हैं। माता-पिता के लिए वह अवैध संतान बोझ बन जाती है और उनका जीवन भी संकटमय बन जाता है।

यशपाल 'दादा कामरेड' में शैल और राबर्ट के संवादों के माध्यम से गर्भ-निवारण की आवश्यकता पर जोर देते हैं - "गर्भ निवारण प्राकृतिक आवश्यकता है। प्रकृति में यह काम दूसरे तरीकों से चलता है। साँपिनी एक हजार अंडे देती हैं, परन्तु जब एक हजार बच्चे निकलते हैं तो स्वयं ही उन्हें पूँछ से घेर कर खाने लगती है। जो एक दो बच जाते हैं, वे ही दूसरे जीवों के लिए आफत हो जाते हैं। ..... गर्भ निवारण भी मनुष्यों को उचित संख्या में रखकर उनके जीवन को सुखी बनाने का उपाय है।"[120]

यशपाल के विचार में "स्त्री को संतानोत्पत्ति मजबूर होकर या दूसरे के भाग का साधन बनकर न करनी पड़े। वह अपने आपको समाज का एक

---

118 यशपाल - दादा कामरेड, पृ. 138

119 यशपाल - दादा कामरेड, पृ. 138

120 यशपाल - दादा कामरेड, पृ. 139

उत्तरदायी, स्वतंत्र अग समझकर, अपनी इच्छा से संतान पैदा करे।"[121] इसके अतिरिक्त राबर्ट के माध्यम से यशपाल का कहना है कि "जीवन में ऐसा समय भी आता है जब संतान की इच्छा होती है तभी उसे आना चाहिए।"[122] जिससे कि समाज में उसके आगमन का स्वागत हो।

'झूठा सच' में मर्सी अवैध गर्भ को एक बीमारी मानती है। वह दूसरी बीमारियों की तरह इसका इलाज भी आवश्यक समझती है। "जो बात शरीर को कष्ट दे, परेशानी पैदा करे, बीमारी है। ..... इसमें घृणित और वाहियात क्या है? यह तो कष्ट निवारण है।"[123]

प्राय: ऐसी मान्यता रही है कि स्त्रियों का कार्य केवल पुरूष को रिझाना और संतान पैदा करना ही है, परन्तु यशपाल की दृष्टि में यह गलत है। उनके विचारों से "स्त्रियों की यह दर्दनाक स्थिति न स्त्रियों के विकास के लिए और न समाज की बेहतरी के लिए कल्याणकारी है।"[124] इसलिए यशपाल अवैध संतान को गम्भीर समस्या मानते हैं और इस समस्या का हल बर्थ कंट्रोल में देखते हैं। उनका विचार है कि इस समस्या का समाधान तभी किया जा सकता है जब परिस्थितियों के अनुकूल सामाजिक मान्यताओं को बदला जा सके। वह 'दादा कामरेड' में इस बात पर जोर देकर साफ-साफ कहते हैं कि अगर किसी नये प्राणी के आगमन से उसका तथा उसके माता-पिता का जीवन संकटमय बन जाए तो उसे घृणा और धिक्कार ही मिलेगा। समाज के सदस्यों का ऐसा घृणित व्यवहार समाज की व्यवस्था पर निर्भर करता है। इसलिए ईसा मसीह का उदाहरण देकर यशपाल बर्थ कंट्रोल की आवश्यकता पर जोर देते हैं - "यदि यह संतान फ्लोरा के जीवन को केवल संकटमय बना दे और स्वयं उसके जीवन के लिए समाज में कोई स्थान न हो तो उसे केवल घृणा और धिक्कार का पात्र बनाने के लिए संसार में लाना कितना अन्याय है? सब कुछ समाज की अवस्था पर

---

121 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 89

122 यशपाल - दादा कामरेड, पृ. 138

123 यशपाल - झूठा सच, भाग-2 (देश का भविष्य), पृ. 344

124 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 89

निर्भर करता है। ईसा मसीह को पूजकर भी समाज आज और मसीहा पैदा होना सहन नहीं कर सकता क्योंकि उसके लिए समाज में कोई स्थान नहीं। मैं समझता हूँ, मौजूदा समाज में बर्थ कंट्रोल के बिना निर्वाह नहीं।"[125]

बर्थ कंट्रोल पर जोर देते हुए यशपाल राबर्ट के माध्यम से एक प्रश्न पूछते हैं – "एक स्वस्थ युवती यदि प्रत्येक बार गर्भवती होने लगे तो उसके लिए जीवन में भोग का अवसर कितनी बार आ सकता है। या तो वह प्रतिवर्ष एक संतान उत्पन्न करेगी, जिसके लिए पृथ्वी पर जगह नहीं या जीवन भर केवल दो-तीन बार से अधिक उसे इस ओर ध्यान न देना चाहिए। ... इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए सभ्यता ने वेश्याओं को जन्म दिया था।"[126] यह सच्चाई है कि जब मनुष्य के लिए भाग स्वाभाविक तथा स्वस्थ जीवन के विकास के लिए आवश्यक है तो उसके लिए बर्थ कंट्रोल भी आवश्यक है जिसमें कैथोलिक (ईसाई) विश्वास नहीं करते। कैथोलिक धार्मिक दृष्टि से बर्थ कंट्रोल अमान्य ठहराया गया है।

'क्यों फँसे' में पुनैया का कहना है कि "आज संतति निरोध हमारे राष्ट्रीय और मानवीय धर्म और कर्त्तव्य बन गये हैं।"[127]

यशपाल ने नसबंदी को भी उचित माना है। पुनैया का कथन है कि "यदि प्रेमिका या नारी की बेपरवाही से उसके गर्भ-संकट में पड़ जाने की आशंका है तो बेटे, हमारी तरह नसबंदी करवा लो।"[128]

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि यशपाल अवैध संतान के विरूद्ध हैं। यद्यपि वह उन्मुक्त काम को बुरा नहीं मानते।

"स्त्रियाँ भी पुरूषों की तरह मनुष्य हैं और उनके कंधों पर भी समाज का उत्तरदायित्व उतना ही है जितना कि पुरूषों के कंधों पर। जब तक स्त्री का शारीरिक और मानसिक विकास निर्बाध रूप से नहीं होगा, उसके द्वारा उत्पन्न

---

125 यशपाल – दादा कामरेड, पृ. 137

126 यशपाल – दादा कामरेड, पृ. 137-138

127 यशपाल – क्यों फँसे, पृ. 75

128 यशपाल – क्यों फँसे, पृ. 75

संतान भी उचित रूप से उत्पन्न न होगी। स्त्री को केवल उपभोग और भोग की वस्तु बनाकर रखना मनुष्य के जन्म के स्रोत को बिगाड़ना है। समाज की उन्नति और वृद्धि के लिए स्त्रियों के मानसिक और शारीरिक विकास तथा समाज में स्त्रियों के समान अधिकार के लिए उन्हें भी पैदावार के कार्य में भाग लेकर उसका फल खाने का समान अवसर होना चाहिए। मार्क्सवाद स्वीकार करता है, संतान उत्पन्न करना केवल स्त्री का ही उत्तरदायित्व नहीं बल्कि यह काम सम्पूर्ण समाज के कामों में एक महत्त्वपूर्ण काम है, मनुष्य समाज का अस्तित्व इसी पर निर्भर करता है।"[129]

अत: कहा जा सकता है कि कुमारी माता की समस्या के प्रति यशपाल जी का दृष्टिकोण उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं है। वह विवाह को बंधन तो मानते हैं पर स्त्री-पुरूष के बीच के स्वस्थ संबंधों का समर्थन करते हैं। स्त्री को उपभोग की वस्तु न मानते हुए उसको समान अधिकार देने के पक्षधर हैं।

(द) परित्यकता स्त्री -

परित्यकता नारी, वह नारी कहलाती है जो पति द्वारा किन्हीं कारणों के वशीभूत होकर परित्याग कर दी जाती है।

देश-विभाजन के समय की स्थिति बड़ी दर्दनाक थी। उसका भुगतान भी स्त्री के बलिदान द्वारा हुआ। इसके लिए पग-पग पर नारी ने अपने जीवन का गलिदान दिया। विभाजन के विकट समय में हिन्दुओं ने मुसलमानों को लूटा और मुसलमानों ने हिन्दुओं को। दोनों पक्ष एक-दूसरे को काफिर बनाने पर तुले हुए थे।

इस समय असंख्य घर तबाह हुए। हिन्दू औरतों ने मुसलमानों के हाथों में पड़ने से कुओं में कूद-कूद कर अपनी जानें गँवा दी। उन्होंने अपनी इज्जत लुटवाने से बेहतर जान दे देना उचित समझा, लेकिन दुर्भाग्यवश जो पर-पुरूषों के हाथों में पड़ गई उनका जीवन निरर्थक हो गया क्योंकि ऐसी नारियों के साथ किसी की सहानुभूति नहीं थी। वह फिर से दर-ब-दर की ठोकरें खाने के लिए छोड़ दी गई

---

129 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 89

या उन्होंने रोते-रोते दम तोड़ दिये। अपने ही घर में अपने ही पति द्वारा स्वीकार्य न होने पर उनकी बड़ी दर्दनाक दशा हुई। यदि उस समय ही पुरूष वर्ग इनके हृदय की गहराइयों को भाँप लेते या इनके जीवन को पाषाण बनाने वाले आँसुओं की करूण कहानी सुनकर इनके असीम दु:ख को हल्का करने का प्रयत्न करते तो शायद आज के इतिहास में नारी की परिस्थिति कुछ और ही होती। उस समय नारी पर क्या-क्या बीता और आज भी समाज में परित्यकता नारियों की क्या स्थिति है, इस समस्या की ओर भी यशपाल जी ने विचार किया है।

यशपाल जी के 'झूठा सच' उपन्यास की बंती देश-विभाजन के समय अपने परिवार से बिछुड़ जाती है। जब वह शेखपुरा मंडी में एक हवेली में पहुँचाई जाती है तब वहाँ और भी स्त्रियाँ होती हैं जिनके शरीर पर पूरे वस्त्र भी नहीं। एक बुढ़िया को कुछ रूखी रोटियाँ दिन में एक बार दी जाती थीं। कभी-कभी वह भी नहीं। उन्हीं में से एक बंती नामक स्त्री अपने घर में वापिस जाने की आस लगाये बैठी थी। उसका कहना था कि "महाराज जी चाहें तो क्या नहीं हो सकता? सीता माता रावण की कैद में रहकर भी भगवान रामचन्द्र जी के पास पहुँच गई थीं।"[130] दुर्गा नाम की औरत भी इनके समान वहाँ कैद थी, उसे बंती की बात पसंद नहीं आई, वह बोल उठी "घर से एक बार निकली, दर-दर ख्वार हुई तीमी (अबला) को फिर कौन रखता है? घर से निकली तीमी और डाल से टूटा फल, उनका फिर मेल क्या?"[131] दुर्गा के माध्यम से यशपाल जी ने यह स्पष्ट किया है कि नारी के एक बार दूसरों के हाथ में पड़ जाने से वह पति द्वारा स्वीकार नहीं की जाती फिर भी बंती आस लगाये बैठी थी, उसे क्रोध आ गया तथा वह कहने लगी - "मैं घर से निकली हूँ? ..... सब कुछ सभी की आँखों के सामने हुआ है। घर से हम निकली हैं या वे लोग हमें डर से छोड़ गये या उन्होंने जबरन छीन लिया? जो हुआ, उसमें कोई क्या कर सकता था? किसे दोष दें?"[132]

---

130 यशपाल - झूठा सच, पृ. 203-204

131 यशपाल - झूठा सच, पृ. 204

132 यशपाल - झूठा सच, पृ. 204

अनेक मुसीबतों को पार करती हुई बंती जब भारत पहुँच जाती है तो सर्वप्रथम तारा से अपने परिवार से मिलने की इच्छा व्यक्त करती है। तारा का साथ पूरे रास्ते वह इसलिए नहीं छोड़ना चाहती थी क्योंकि तारा एक पढ़ी-लिखी, साहसी लड़की है। वह किसी तरह उसे उसके परिवार से मिला ही देगी। लेकिन नारी का कितना शोषण किया जाता है, परिवार वालों ने उसे अपनाया नहीं। जैसा कि दुर्गा ने बंती से कहा था वही होकर रहा। यशपाल जी यहाँ यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि नारी ही यह अन्याय चुपचाप क्यों कर लेती है। अगर पुरूष घर से बाहर रहकर आये तो पत्नी को अपने पति को स्वीकार करना ही पड़ता है। पत्नी को स्वीकार पति क्यों न करे?

यहाँ तक कि बंती अपने बच्चे को भी नहीं उठा सकती। वह सास से झपट कर बच्चे को ले लेती है और सीने से लगा लेती है, परन्तु जैसे ही वह बैठती है तो सास चुपचाप उसकी गोदी से बच्चे को लेकर भीतर चली जाती है और बंती को घर में घुसने नहीं देती। उसका कहना है - "हट जा, दूर रह! बाहर निकल! ... दूर रह, तुझे कह दिया। तू अब हम लोगों के किस काम की।"[133] पास पड़ोस वाले भी कुछ बंती का साथ देते हैं कुछ उसकी सास का। यशपाल जी यहाँ यह स्पष्ट करते हैं कि ऐसी दयनीय अवस्था में कैसे एक औरत दूसरी औरत पर अत्याचार करती है। जब बंती का जेठ तथा उसका पति बाहर से आते हैं तो वह भी उसे स्वीकार करने से इन्कार कर देते हैं। उस समय का चित्रण अत्यंत दर्दनाक है। विभाजन के समय का यह वास्तविक चित्रण है। उसके पश्चात् बेचारी बंती दहलीज पर सिर पटक-पटक कर प्राण दे देती है तब उसे पवित्र, सती तथा सुहागिन समझा जाता है।

वास्तव में देखा जाए तो बंती का क्या कसूर था। वह अपनी मर्जी से कहीं नहीं गई थी फिर भी उस समय की विकट परिस्थितियों से जूझकर अपने परिवार को ढूँढ निकालती है तो भी समाज के लोगों का यह अन्याय जो उसे आत्महत्या करने के लिए विवश कर देता है।

---

[133] यशपाल - झूठा सच, भाग-2 (देश का भविष्य), पृ. 122

यशपाल जी ने विभाजन के समय का यथार्थ चित्रण किया है। देश विभाजन के समय इस तरह कई नारियों का जीवन तबाह हो गया था लेकिन समाज ने यह कदापि नहीं सोचा कि इसमें इन अभागिनों का क्या अपराध था?

(य) अपहृत नारी –

अपहृत नारी से तात्पर्य है जिस नारी का पराये द्वारा अपहरण हुआ हो और ऐसी नारी जब पति की संदेहात्मक वृत्ति का शिकार हो जाती है तो फिर वह कभी भी पति की सहभागिनी नहीं बन पाती।

नारी का अपहरण नारी जीवन के प्रति घोरतर अन्याय है। महत हिन्दू स्त्रियों में कुछ इस प्रकार की भी रहती है जिनका जीवन घर और समाज की अमानुषिक यंत्रणाएँ सह-सह कर इतना दुर्वह हो जाता है कि इनके सम्मुख इन मुसीबतों से छुटकारा दिलाने का कोई भी रास्ता सामने आ जाए, उन्हें बुरा नहीं लगता। ऐसी स्थिति में वह एक तरफ नरक से छुटकारा पाते-पाते दूसरे नरक में उलझ जाती है यानि कि विपदाओं में उलझते-उलझते वह अपना विवेक और बुद्धि खो बैठती है तथा किसी की झूठी तथा सच्ची सहानुभूति का शिकार हो जाती है।

यशपाल जी ने 'झूठा सच' में अपहृत नारी की चर्चा की है। 'झूठा सच' की तारा सोमनाथ के साथ विवाह नहीं करना चाहती थी लेकिन पारिवारिक परिस्थितियाँ कुछ ऐसी थीं कि विवाह हो ही जाता है और तारा भी अपने मन को समझा-बुझाकर पतिगृह की ओर विदा हो जाती है। सुहागरात को ही सोमनाथ तारा को पीट भी रहा था तथा उस पर तरह-तरह के आरोप लगा रहा था क्योंकि वह सोमनाथ के साथ विवाह करने के लिए तैयार न थी। इसी बीच उनके मोहल्ले में मुसलमान आकर लूट-मार करते हैं तथा घरों में आग लगा देते हैं। घर को आग की लपटों से घिरा हुआ देखकर तारा छत के रास्ते घर से भाग जाती है। सब यह सोचते हैं कि वह आग में ही जलकर खत्म हो गई होगी, किन्तु भागती हुई तारा नब्बू नामक मुसलमान के पंजे में फँस जाती है और वह उसका अपहरण कर लेता है।

हिन्दुस्तान पहुँचने पर वह एक आत्मनिर्भर तथा योग्य नारी साबित होती है। इसी बीच डॉ. प्राणनाथ से उसकी भेंट होती है और वह तारा को चाहने लगते हैं तथा विवाह के लिए कहते हैं, परन्तु तारा विवाह से साफ इंकार करके कहती है, "..... मैं रूग्ण शरीर हूँ।"[134] वह अपनी बीती कहानी उनको सुना देती है। यह कहानी सुनकर डॉ. प्राणनाथ उसे सांत्वना देते हैं और विवाह के लिए तारा को तैयार कर लेते हैं तथा इलाज के लिए उसे बम्बई, लंदन या बियाना जहाँ चाहे ले जाने का वायदा करते हैं तथा निभाते हैं।

विभाजन के समय नारियाँ जब मुसीबतों से बचती-बचाती किसी ऐसे स्थान पर पहुँच जाती हैं जहाँ पर वह अपने आपको सुरक्षित समझती है, लेकिन वहाँ भी दुर्भाग्य उनका साथ नहीं छोड़ता। 'झूठा सच' उपन्यास में मंडी के पीछे के मुहल्ले में, ऊधोदास के मकान में दस-बारह हिन्दू स्त्रियाँ कैद थीं। वहाँ से उन्हें हिन्दुस्तान भिजवाने का प्रबन्ध किया जा रहा था लेकिन औरतें वहाँ भी निश्चिन्त नहीं थीं। तारा भी वहीं पहुँचाई गई। बंसी ने तारा को बताया कि "जब उसे यहाँ लाया गया था तो लक्खी के साथ तीन और भी लड़कियाँ थीं। दूसरे दिन सुबह ही भरा मूँछों वाला कसाई दो मर्दों को लेकर आया और उन तीनों को ले गया।"[135]

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि विभाजन के समय स्त्रियों-पुरूषों, बूढ़ों-बच्चों सब की दुर्दशा हुई। लोगों के घर तबाह हो गये लेकिन सबसे ज्यादा नारी ही इस विभाजन के शिकंजे में बुरी तरह फँसी है। कई नारियाँ जान से हाथ धो बैठीं, जिनकी जान बच जाती है वह दूसरा धर्म अपनाने के लिए तैयार नहीं हैं, इसलिए उन्हें खत्म कर दिया गया। अगर फिर भी बचकर निकल जाती है तो पुरूष की लोलुप दृष्टि उनका पीछा करके उनका अपहरण कर लेती है। ऐसी दशा में अगर वह अपने पति, बच्चों तथा घर के अन्य सदस्यों को ढूँढ भी लेती है तो घर के अन्य सदस्य उसे दहलीज के पार भी नहीं जाने देते। किन्तु

---

134 यशपाल - झूठा सच, भाग-2 (देश का भविष्य), पृ. 385

135 यशपाल - झूठा सच, भाग-1 (वतन और देश), पृ. 201

औरत ने पुरूष के साथ ऐसा अन्याय नहीं किया। उसके लौट आने से वह समझती है कि उसका उजड़ा हुआ घर फिर से बस गया है।

इस प्रकार विभाजन के समय में नारी ने अनन्त दु:ख भोगे। नारी सदियों से अनन्त दु:ख भोगती आई है और न जाने कब तक भोगती रहेगी। इस तर्क पर श्रीमती महादेवी वर्मा जी का कथन है कि - "चाहे हिन्दू नारी की गौरव गाथा से आकाश गूँज रहा हो, चाहे उसके पतन से पाताल काँप उठा हो, परन्तु उसके लिए 'न सावन सूखे न भादों हरे' की कहावत चरितार्थ होती रही है। उसे अपने हिमालय को लज्जा देने वाले उत्कर्ष तथा समुद्रतल की गहराई से स्पर्धा करने वाले अपकर्ष दोनों का इतिहास आँसुओं से लिखना पड़ता है और सम्भव है भविष्य में भी लिखना पड़े।"[136]

(र) विधवा स्त्री -

हिन्दू समाज में विधवा नारी सबसे तुच्छ और निराश्रय प्राणी मानी जाती है और उसके वैधव्य को नारी का अभिशाप माना जाता है। पिछड़ी हुई जातियों में तथा कुछ गाँवों में अभी भी कुछ नारियाँ हैं जो पुनर्विवाह के बारे में सोच भी नहीं सकती। वे अपनी स्वाभाविक इच्छाओं तथा कामनाओं को दबाकर जैसे-तैसे जीवन बिता देती है। पति को पाने पर यानि कि विवाहोपरांत वह समाज में जैसे अपनी गर्दन ऊँची करके घूमती-फिरती तथा प्रसन्न बदन दिखाई देती है, वैसे ही पति के खोने पर समाज पहले जैसा उसका स्वागत नहीं करता और उसका खिला हुआ चेहरा हमेशा के लिए मुरझा जाता है। यहाँ तक कि पति के मर जाने का कारण वही मानी जाती है और भिन्न-भिन्न विशेषणों को लगाकर उसे ताने दिए जाते हैं। कुलच्छनी ने मेरा बसा-बसाया घर बरबाद कर दिया या सास की सुरीली आवाज सुनाई देगी - 'डायन मेरे बेटे को निगल गयी।'

'मनुष्य के रूप' उपन्यास की सोमा जो गांव की अनपढ़ लड़की है, विधवा होकर अनेक मुसीबतें झेलती है। विवश सोमा विधवा जीवन के अभिशाप को

---

136 महादेवी वर्मा - शृंखला की कड़ियाँ, पृ. 34

झेलने को मजबूर है। ससुराल वाले उसे अनेक प्रकार के ताने देते हैं, शारीरिक यातनाएँ देते हैं। पति की मृत्यु का कारण उसे ही बताते हुए सास कहती है – "मेरे शेर जैसे बेटे को भी खा गई।"[137] घर के सारे काम उसी को करने पड़ते, ऊपर से दिन-रात डाँट और मार भी पड़ती। उसका कहना है – "ब्याह के नवें महीने चिट्ठी आकर गिरी कि गोली लगकर मर गया। ..... मैं हूँ खरीदी हुई, और अब राँड! हड्डियाँ काम में भी टूटती हैं और मार से भी। मर्दों से कहने की बात तो नहीं है पर सारे बदन पर नील पड़े हुए हैं।"[138]

वह परिवार के अन्य सदस्यों के लिए भार स्वरूप है। सास के कथन से यह स्पष्ट होता है – "विधवा बहू तो जिन्दगी का जंजाल है।"[139] इस प्रकार के कड़वे शब्द उसके मुँह से तभी निकलते हैं जब वह बहू के साथ अपनी बेटी के समान व्यवहार नहीं करते। दु:खी होकर वह स्वयं भी सास की बात का समर्थन करती है – "दु:खों का क्या है जो दुनिया में बोझ होते हैं, उनका ऐसा ही हाल होता है।"[140]

इस विधवा नारी सोमा पर घर और बाहर के लोगों द्वारा अनेक अत्याचार किए जाते हैं। यहाँ तक कि उसका जीना दुष्वार हो जाए। बाहर के लोग उसे उपभोग का पात्र मानते हैं और घर के लोग दासी। फटी हुई सुत्थन में अगर टांका लगाने बैठ गई तो कोख में लात मारकर कहती है – "जनने वालों का कफन सीने बैठ गयी है, पानी तेरी माँ लाएगी।"[141] अप्रत्यक्ष रूप से उसके माता-पिता को भी गालियाँ दी जाती हैं। बकरियां चराने का काम भी उसे ही सौंपा गया है। अगर वह नहीं जाती तो कोई भी पकड़कर उसका दूध निकाल लेता है और अगर जाती है तो कहती हैं काम में टहलने का बहाना करके यारों को मिलने जाती है। सब तरह मरन है। स्पष्ट है कि सोमा को इतनी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है क्योंकि वह अशिक्षित तथा निम्न परिवार की विधवा नारी है। वास्तव में अशिक्षित निष्क्रिय

---

137 यशपाल – मनुष्य के रूप, 43

138 यशपाल – मनुष्य के रूप, 19

139 यशपाल – मनुष्य के रूप, 43

140 यशपाल – मनुष्य के रूप, 18

141 यशपाल – मनुष्य के रूप, 19

हिन्दू विधवा नारी जीते जी मृतप्राय: है। आज भी समाज में कई ऐसी विधवा नारियाँ हैं जिनके साथ सोमा के समान दुर्व्यवहार किया जाता है। यशपाल जी ने 'मनुष्य के रूप' में निम्न परिवार की विधवा नारी के प्रति समाज तथा परिवार के अत्याचार का यथार्थ चित्रण किया है।

यशपाल ने 'देशद्रोही' उपन्यास में राज के चरित्र के माध्यम से विधवा समस्या को नये ढंग से प्रस्तुत किया है। कैप्टन डॉ. खन्ना को वजीरीस्तान के लुटेरे सैनिक कैम्प में से उठाकर ले जाते हैं लेकिन घर वालों को सूचित किया जाता है कि कैप्टन की मृत्यु हो गई है। यह खबर सुनकर उसके हृदय पर गहरा आघात पहुँचता है। राज विधवा हो जाती है। दिन-ब-दिन उसकी दशा बहुत खराब होती जाती है। बद्रीबाबू से प्रेरित होकर राज सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने लगती है और अपने समय का अधिक भाग कांग्रेस के रचनात्मक कार्यों में खर्च करने लगती है। उसके कार्यक्रम का मुख्य अंग था, मजदूर बच्चों की शिक्षा और सेवा। घर में भोजन और बसेरा था। परिवार के लोग उसे सुना-सुनाकर बातें करते, ताने भरते जिस कारण उसका घर में रहना मुश्किल हो गया।

वास्तव में देखा जाए तो यह सत्य भी था क्योंकि वह विधवा है। इस कारण उसका इस प्रकार घूमना, पूरा दिन बाहर बिताना और फिर केवल सोने के लिए घर में आ जाना अच्छा नहीं है। समाज यह कदापि पसंद नहीं करेगा। ऐसी औरत का घर के सदस्य भी स्वागत नहीं करेंगे, चाहे वह समाज-सेवा, राष्ट्र-सेवा के उद्देश्य से ही सारा दिन बाहर क्यों न बिताती हो फिर भी समाज ऐसी सच्चरित्र नारी को कलंकिनी की दृष्टि से देखता है। हर बात में उसकी आलोचना की जाती है। विधवा नारी तो फिर भी बेसहारा होती है। भला इस तरह उसे कौन जीने देगा। इसलिए आखिरकार राज ने घर त्याग दिया और बद्रीबाबू के साथ आश्रम में ही रहने लगी और बाद में परिस्थितियों से समझौता करके बद्रीबाबू से विवाह भी कर लिया और फिर से अपना नया जीवन शुरू किया।

अनेक देशों का भ्रमण करने के पश्चात् जब डॉ. खन्ना राज से मिलने की आशा लिए हुए भारत पहुँचते हैं तो उन्हें पत्नी के पुनर्विवाह की खबर मिलती

है। वह इस खबर को सुनकर विचिलत अवश्य हो जाते हैं, परन्तु सोचते हैं कि राज का उनकी अनुपस्थिति में विवाह करना स्वाभाविक ही था। इसलिए वह राज को मिलकर उसे परेशान नहीं करना चाहते थे। वास्तव में डॉ. खन्ना ने यह ठीक ही किया। यशपाल ने डॉ. खन्ना के उदात्त दिल का चित्रण किया है। परन्तु राजनीतिक संघर्ष के समय वह पंगु बन जाता है। इस असहाय अवस्था में चंदा उसे राज के पास ले जाती है। अभी राज जो अपने आपको विधवा समझती थी, पुनर्विवाह के पश्चात् डॉ. खन्ना यानि कि अपने पूर्व पति के जीवत होने की खबर पाकर बेहोश हो जाती है। उस विधवा नारी के सम्मुख उठी समस्या को यशपाल भाँप लेते हैं। उनका कहना है – "मैं राज के लिए शत्रु हो गया? वह दीवार की ओट पड़ी है। मुझे देखने भी नहीं आ सकती? वह तो मेरे प्रेम में प्राण न्यौछावर कर रही थी! ..... आज क्या हो गया? हाय री स्त्री! तेरा प्रेम भी मजबूरी का है, गुलामी का है।"[142] किसी दिन खन्ना के प्रति वह पूर्ण समर्पित थी, उसे डॉ. खन्ना से सच्चा प्रेम था लेकिन आज उसी बेसहारा खन्ना को ठुकराने के लिए भी तत्पर हो जाती है। यह है नारी की विवशता।

आज से कुछ वर्ष पूर्व प्राय: देखा जाता था कि पति की मृत्यु के बाद विधवा अपने पति से प्रेम करती थी तथा पतिव्रत धर्म का पालन करती थी। हिन्दू समाज में उससे कई बातों को जबरदस्ती मनवाया जाता था, जिसमें सती-प्रथा भी थी। लेकिन आधुनिक युग में ऐसा नही है और उसे जकड़ने का प्रयत्न तो किया गया परन्तु वह जकड़ न सके, जैसे 'मेरी तेरी उसकी बात' की ऊषा के विधवा हो जाने पर यशपाल जी ने बाल काटने की बात उठाई तो थी परन्तु आधुनिक नारी का विचार करके उसके बाल नहीं काटे गये। पुरूष प्रधान समाज में पति की मृत्यु के पश्चात् पत्नी का समाज में कोई महत्त्व नहीं रह जाता और विधवा नारी का जीवन असह्य हो जाता है। आज का समय यह सोचने लगा है कि वास्तव में विधवा भी एक जीवित प्राणी है। यह संभव होना मुश्किल है कि मृत पति के प्रति उसका प्रेम अडिग तथा स्थिर रहे। जीवित प्राणी परिस्थितियों से समझौता कर लेता है। यही बात विधवा राज के साथ भी

---

142 यशपाल – देशद्रोही, पृ. 297

लागू होती है। उसने परिस्थितियों के साथ समझौता करके विवाह तो कर लिया लेकिन उसके साथ वही अनहोनी घटना घटती है कि उसका पति जीवित था, अभी उसे मुसीबत के समय आश्रय तो क्या, उसका मुख देखने का भी उसमें साहस नहीं है।

ऐसे ही परिस्थितियों के साथ समझौता करके 'बारह घंटे' की विधवा विनी विधुर फेंटम के साथ चल दी थी।

यह सत्य है कि एक के चंगुल से निकल कर नारी दूसरे के चंगुल में फंसकर गुलामी करती है और अगर बच्चे भी हैं तो और भी मुश्किल हो जाता है। बच्चों को पिता का स्वाभाविक प्यार मिलता भी है या नहीं? अगर नारी अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास कर ले और अपने पैरों पर खड़ी हो जाए और संयम तथा साहस से काम ले और आत्मनिर्भर हो जाए तब वह अनेक सामाजिक समस्याओं का सामना करने में समर्थ सिद्ध होगी अन्यथा उसका जीना दूभर हो जाएगा।

एक समय था, जब पति की सम्पत्ति का कोई हिस्सा पत्नी को नहीं मिलता था परन्तु अब कानूनन नारी को पति की संपत्ति का हिस्सा मिल जाता है, अर्थात् सरकार भी इस ओर ध्यान दे रही है।

इस युग में विधवा चाहे तो विवाह भी कर सकती है। अगर वह विवाह नहीं करना चाहती तो शिक्षित तथा स्वावलम्बिनी होने के कारण वह अपनी इस विकट समस्या को स्वयं सुलझाने में समर्थ हो गई है।

यशपाल की 'अमिता' की महारानी नंदा विधवा हो जाने पर धर्म की शरण में चली जाती है जिससे उसके मन को शांति मिलती है तथा उस समय की सामाजिक परम्परा के अनुसार यशपाल महारानी नंदा का पुनर्विवाह नहीं कराते। इसके अतिरिक्त दूसरी साधारण नारियों के समान उसके सम्मुख आर्थिक समस्या भी नहीं थी। ऐसी नारियों का पुनर्विवाह करने का प्रश्न भी नहीं उठता।

यशपाल ने 'मेरी तेरी उसकी बात' में विधवा गौरी का चित्रण किया है। वह विधवा होने पर ससुराल वालों का अत्याचार चुपचाप सहती रहती है। उसे

अपनी नन्हीं-सी बच्ची के बारे में भी बहुत कुछ सुनना पड़ता है। लेकिन जब गौरी का भाई उसे बच्ची सहित अपने घर में ले आता है तो वह भी पढ़-लिखकर आत्मनिर्भर बनना चाहती है। पुनर्विवाह के लिए मना कर देती है क्योंकि गौरी भी प्राचीन मान्यताओं तथा संस्कारों से घिरी हुई है।

यशपाल ने अपने उपन्यासों में ऐसी नारियों का भी चित्रण किया है जो परिवार तथा समाज का अत्याचार सहती हुई अपने दीर्घ जीवन को नष्ट-भ्रष्ट नहीं करतीं। घर छोड़कर भाग जाती हैं या पुनर्विवाह कर लेती हैं।

यह सच है कि यह हमारे समाज के सदस्यों का ही अपराध है कि वह विधवा नारी के प्रति बुरे विचार रखते हैं तथा उन पर लांछन लगाकर उसके जीवन को दूषित बना देते हैं। अगर घर के सदस्य उसे पहला जैसा ही प्यार दें और उसकी अवहेलना न करें तो संभव है वह 'देशद्रोही' की राज की तरह अपना घर छोड़कर नहीं जाएगी। इससे भी बेहतर यह है कि जहाँ उसका झुकाव हो या उसकी अनुभूति से पुनर्विवाह कर दिया जाए।

अंततः यह कहा जा सकता है कि यदि उसके जीवन में अनुशासन है, साहस तथा संयम है तो वह नारी अपने पैरों पर खड़ी होकर अपने जीवन के सही मार्ग की ओर अग्रसर होती है और अपने आगामी जीवन को सुखी बनाने के लिए उसे कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। कभी-कभी जीवन की विषम परिस्थितियाँ उसके साहस को तोड़ देती हैं और वह अपने आपको निःसहाय महसूस करने लगती है। उसकी उच्च शिक्षा और नैतिक साहस उसका साथ छोड़ता हुआ प्रतीत होता है। इसलिए आज की नारी ने पुनर्विवाह की ओर ठोस कदम उठाने शुरू कर दिये हैं। स्वाभाविक तौर पर थोड़े समय के लिए उस ओर समाज की उँगलियाँ उठती हैं, तदुपरान्त सबके मुँह बन्द हो जाते हैं।

सारांश में यह कहा जा सकता है कि विधवा स्त्री की मुख्य समस्या जीवन-यापन की होती है। सुखी जीवनयापन के लिए दो परिस्थितियाँ हो सकती हैं। प्रथम, विधवा पुनर्विवाह कर ले एवं द्वितीय, आत्मनिर्भर होकर शेष जीवन बिताए। संतानहीन विधवाएँ दोनों मार्ग चुन सकती हैं, परन्तु संतान सहित विधवा

के लिए द्वितीय मार्ग ही अधिक उपयुक्त होता है क्योंकि संतान के कारण पुनर्विवाह इतना सरल नहीं होता।

उच्च वर्ग की महिलाओं ने वैधव्य को बिल्कुल ही नकार दिया है। उच्च वर्ग में हमें ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जिसमें महिलाओं ने वैधव्य को बिल्कुल नकार कर समाज की कठिनाइयों से जूझते हुए अपना रास्ता बनाया है और न केवल भारतीय समाज बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय समाज में भी प्रतिष्ठा प्राप्त की है।

(ल) स्त्री और पुरूष के पारस्परिक दाय –

स्त्री-पुरूष सम्बन्ध प्रारम्भ से ही एक सामाजिक व्यवस्था रही है। इसी पर समाज तथा परिवार का ढाँचा टिका हुआ है। उनके आपसी संबंधों से ही उनका विकास सम्भव है।

यशपाल ने स्त्री-पुरूष संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा है – "वैयक्तिक सम्पत्ति या परिवार के राज में पुरूष राजा है तो स्त्री मंत्री। ... समाज की रक्षा के लिए वे दोनों एक समान अवश्य हैं। पुरूष यदि सामाजिक परिस्थितियों के कारण शारीरिक बल में या मस्तिष्क के कार्यों में अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है, तो स्त्री का महत्त्व पुरूष को उत्पन्न करने में ..... कम नहीं है। पुरूष समाज का अस्तित्व स्त्री के बिना सम्भव नहीं। .... इसलिए पुरूष के अधीन होकर भी स्त्री उसके बराबर ही आसन पर बैठती रही है।"[143]

हिन्दी साहित्य में यशपाल एक विद्रोही लेखक माने जाते हैं और वर्तमान सामाजिक ढाँचे के प्रति उनके मन में विद्रोह की भावना थी। आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत वर्तमान सामाजिक ढाँचा अनेक परम्परागत मान्यताओं, जड़ताओं, विकृतियों तथा असमानताओं से भरा हुआ है जिसके फलस्वरूप समाज में अनेक समस्याएँ उभरती हैं और उन समस्याओं का शिकार स्त्री ही बनती है, पुरूष नहीं। ये समस्याएँ जनजीवन तथा समाज के स्वस्थ विकास के लिए बाधा स्वरूप हैं।

---

143 यशपाल – मार्क्सवाद, पृ. 85

वस्तुतः यशपाल ने अपने उपन्यासों में परम्परागत मान्यताओं, रीति-रिवाजों, आदर्शों का खण्डन करके नवीन सामाजिक मान्यताओं की स्थापना की तथा वह आजीवन आदर्शों को ढूँढ निकलाने में प्रयत्नशील रहे। इसके अतिरिक्त यशपाल ने उनके सामाजिक जीवन की गहराई में जाकर स्त्री-पुरूष से संबंधित तथ्यों की छानबीन की और इन तथ्यों को समझाने के लिए उनकी आज की परिस्थितियों तथा परम्परागत मान्यताओं में सामंजस्य ढूँढने का प्रयत्न किया। ऐसा सामंजस्य जो समाज तथा व्यक्ति के लिए कल्याणकारी हो। व्यक्ति के अस्तित्व को कायम रखने के लिए समाज का होना आवश्यक है। इसलिए उनका कहना है - "समाज व्यक्तियों और परिवारों का समूह है - परिवार स्त्री-पुरूष का संबंध समाज का केन्द्र है।"[144] स्त्री-पुरूष संबंध, प्रेम और विवाह, धर्म इत्यादि को यशपाल ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से देखा। एक सच्चे उपन्यासकार होने के नाते उनका जीवन में यही उद्देश्य रहा कि वह जनजीवन के स्वस्थ विकास के लिए सही मार्ग प्रशस्त करें तो स्त्री पुरूष के पारस्परिक संबंध के लिए उपयोगी सिद्ध हों।

यशपाल ने नारी जीवन से संबंधित सभी पक्षों की ओर ध्यान दिया है, परन्तु अपने उपन्यासों में जिस विषय को सर्वाधिक गम्भीर रूप से प्रकट किया है, वह है - 'स्त्री-पुरूष संबंध।'

"आज की प्रबुद्ध नारी के सम्मुख सबसे विशिष्ट समस्या है कि या तो वह अपनी स्वतंत्र वैयक्तिकता की प्रतिष्ठा करे या पारिवारिक सीमाओं में बद्ध हो जाए। आज की नारी असमंजस की स्थिति में है और इसी स्थिति में जो पुरूष नारी संबंधों की रचना होती है, उसके विषय में भी कोई निश्चित दृष्टि अपना सकने की क्षमता अभी नारी-वर्ग में नहीं आई है।"[145] ऐसी स्थिति में जहाँ नारी की अपनी स्वतंत्र आवाज नहीं उठती, नारी पराधीनता की स्थिति दृष्टिगोचर होती है। स्त्री-पुरूष के संबंध में विषमता आने का मुख्य कारण है - नारी की पराधीनता।

---

144 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 84

145 सुशीला मीतल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएँ, पृ. 189

नारी की पराधीनता का मुख्य कारण प्रकृति द्वारा नारी को सौंपा गया मातृत्व का उत्तरदायित्व। उसको दूर करने का उपाय है उसे अपने पैरों पर खड़ा करना। उसके रूप में आर्थिक स्वाधीनता प्रधान है। इस प्रकार नारी की पराधीनता का सर्वप्रथम कारण है कि वह आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं है। जीवन के विविध साधनों की पूर्ति के लिए उसे पुरूष वर्ग पर निर्भर रहना पड़ता है।

प्राय: नारी आर्थिक क्षेत्र में पुरूषों के अधीन रही है। इस विषय में यशपाल जी का कथन है - "स्त्री की खोपड़ी में भी पुरूष की तरह सोचने-विचारने और उपाय ढूँढ निकालने की सामर्थ्य है इसलिए पुरूष उसे गले में रस्सी बाँधकर नहीं रख सका।"[146]

अपनी अहं भावना के कारण पुरूष वर्ग नारी को दासी के रूप में देखना चाहता है इसलिए वह नारी स्वतंत्रता तथा समानाधिकार के विरूद्ध है। किसी न किसी प्रकार नारी में हीन भावना भर देता है और वह समझने लगती है ि कवह पुरूष के बिना अधूरी है और उसकी गुलामी स्वीकार कर लेती है और पुरूष वर्ग अपने अहंभाव के कारण नारी को पराधीन बनाकर अपने अहं की तुष्टि करना चाहता है। पुरूष की तुष्टि स्त्री को केवल दासी के रूप में देखने में ही मिलती है। वह नारी के जीवन संगिनी तथा सहचरी के पद को भूलकर उसकी इच्छाओं को कुचलकर उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाता है। "स्त्री पति की दासी नहीं, उसकी सहचारिणी है, अर्धांगिनी है, मित्र है।"[147] पुरूष की अहं भावना को यशपाल सामाजिक अपराध की दृष्टि से देखते हैं।

इसके अतिरिक्त दुनिया के बहुतांश हिस्सों में नारी उपभोग की वस्तु ही मानी जाती है। पुरूष वर्ग बार-बार नारी को इस बात के लिए सचेत करता है कि वह भोग्या है। प्राय: नारी के प्रति पुरूष का दृष्टिकोण परम्परावादी रहा है। स्त्री-पुरूष का वैवाहिक संबंध अस्थायी होता है। विवाह के कुछ दिनों उपरान्त अगर नारी से प्राप्य भोग-विलास में कुछ कमी दिखाई देती है तो पुरूष वर्ग का वह प्रेम जीवन की अंतिम घड़ियाँ गिनने लगता है फिर वह किसी और स्त्री या

---

146 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 85

147 महात्मा गाँधी - महिलाओं से, पृ. 182

युवती से अवैध संबंध स्थापित कर लेता है। इसके विपरीत अगर स्त्री, पुरूष से संतुष्ट नहीं है तो वह ऐसा कदापि नहीं कर सकती, क्योंकि वह तो पराधीन है और उसे पुरूष की गुलामी करके जीवन बिताना है। वह सामाजिक मान्यताओं तथा परम्पराओं को मानने के लिए बाध्य है। उसका धर्म अपने पति के साथ जीवन बिताना है। यशपाल जी इन सामाजिक मान्यताओं को तोड़ने का समर्थन करते हैं

यशपाल पुरूष वर्ग के इस संस्कारबद्ध भोगमूलक प्रवृत्ति पर 'दिव्या' में श्रेष्ठी के माध्यम से पुरूष वर्ग पर कठोर प्रहार करते हैं - 'दिव्या' में श्रेष्ठी का कथन है - "पुत्र, स्त्री भोग्य है। मतिभ्रम होने पर मोह में पुरूष-स्त्री के लिए बलिदान होने लगता है। वत्स, ऐसी ही परिस्थिति में नीतिज्ञ, महत्त्वाकांक्षी और परलोकगामी पुरूष के लिए नारी को पतन का द्वार कहते हैं।"[148] अपने बीते हुए जीवन की दर्दनाक घटनाओं तथा पीड़ाओं का स्मरण कर दिव्या भी इसी को सत्य मानती है कि "नारी रूप से वह सभी पुरूषों के सम्मुख भोग्य है। यही उसका आकर्षण है ..... भोग्या।"[149]

अपने तात-गृह के त्याग के पश्चात् भिन्न-भिन्न लोगों के संपर्क में आकर जो उसने कड़वे घूँट पिये उससे वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचती है कि, "जो भोग्या बनने के लिए उत्पन्न हुई है, उसके लिए अन्यत्र शरण कहाँ? उसे सब भोगेंगे ही।"[150]

मारिश के माध्यम से यशपाल नारी के प्रति पुरूष वर्ग का दृष्टिकोण स्पष्ट करते हैं "नारी प्रकृति के विधान से नहीं, समाज के विधान से भोग्य है।"[151] यह सत्य है प्रकृति ने नारी को भोग्या बनने के लिए नहीं बनाया बल्कि समाज द्वारा बनाये हुए नियम तथा विधान के द्वारा ही नारी को भोग्या बनना पड़ा। यशपाल पुरूष वर्ग के इस सामंती दृष्टिकोण के विरूद्ध थे। वे लिखते हैं - "जब तक स्त्री का शारीरिक और मानसिक विकास निर्बाध रूप से न होगा, उसके द्वारा उत्पन्न संतान भी उचित रूप से उन्नत न होगी। स्त्री को केवल उपयोग और भोग

---

148 यशपाल - दिव्या, पृ. 89

149 यशपाल - दिव्या, पृ. 155

150 यशपाल - दिव्या, पृ. 102-103

151 यशपाल - दिव्या, पृ. 159

की वस्तु बनाकर रखना मनुष्य के जन्म के स्रोत को बिगाड़ना है। ..... समाजवादी और समष्टिवादी समाज में स्त्री भी समाज का उत्पादक या पैदावार करने वाला अंग होगी। उसे केवल पुरूष के भोग और रिझाव का साधन न समझा जाएगा।"[152]

पुरूषों में विद्यमान एकाधिकार की भावना भी नारी की स्वतंत्रता में बाधक सिद्ध होती है। वह केवल उसे अपनी ही बनाकर रखना चाहता है, लेकिन 'देशद्रोही' में डॉ. खन्ना के माध्यम से यशपाल कह उठते हैं - "न मैं विश्वास करता हूँ कि स्त्री को एक ही व्यक्ति के उपयोग की वस्तु बनाकर सुरक्षित रख लेना आचार निष्ठा का सबसे बड़ा आदर्श है। पुरूष की वंशरक्षा के लिए संतानोत्पत्ति का साधन होने के अतिरिक्त स्त्री का अपना व्यक्तित्व और संतोष भी कोई चीज है।"[153] इस प्रकार यशपाल पुरूषों में विद्यमान एकाधिकार की भावना के विरूद्ध हैं। इसलिए उनका कहना है कि स्त्री-पुरूष के संबंध में मार्क्सवाद का रूख लेनिन की एक बात से स्पष्ट हो जाता है। लेनिन ने कहा था - "स्त्री-पुरूष का संबंध शरीर की दूसरी आवश्यकताओं भूख, प्यास, नींद की तरह ही आवश्यक है। इसमें मनुष्य को स्वतंत्रता होनी चाहिए परन्तु प्यास लगने पर शहर की गंदी नाली में मुँह डालकर पानी पीना उचित नहीं। उचित है, स्वच्छ गिलास में स्वच्छ जल पीना। स्त्री-पुरूष का संबंध मनुष्यों की शारीरिक, मानसिक तुष्टि और समाज की रक्षा के लिए होना चाहिए न कि स्त्री-पुरूषों को रोग और कलह का घर बना देने के लिए।"[154]

स्त्री-पुरूष संबंधों में विषमता होने के साथ-साथ प्राय: पुरूष का स्त्री-विषयक दृष्टिकोण भी अनुदान ही रहा है। अपनी स्वाभाविक वृत्ति के अनुसार पुरूष वर्ग ने अपना ही भला चाहा है, नारी का नहीं। ऐसा भी देखा गया है कि पुरूष अपनी शारीरिक असमर्थता के बावजूद भी नारी का शोषण करता आया है। अपनी संतुष्टि के कारण वह नारी के पूरे जीवन को नष्ट कर देता है। वह

---

152 यशपाल - मार्क्सवाद, पृ. 89

153 यशपाल - देशद्रोही, पृ. 207-208

154 सुरेशचन्द्र तिवारी - यशपाल और हिन्दी कथा साहित्य, पृ. 174

केवल उसे अपनी उपभोग की वस्तु समझता है और घर की चारदीवारी में कैद करके रखने में ही उसको संतोष मिलता है। पुरूष के इस व्यवहार ने एक प्रकार से नारी के विकास तथा प्रगति के मार्ग में रोड़े अटका दिये। वह भी अपने जीवन की सार्थकता केवल घर-गृहस्थी तक ही समझने लगी। घर से बाहर किसी दूसरे विषय पर वह विचार भी नहीं कर सकती थी।

आज की स्थिति भी उतनी नहीं बदली जिसकी हम संभावना करते हैं और आज भी सदियों की तरह पुरूष नारी का शोषण कर रहा है। कमी पुरूष में होती है और बदनाम औरत को किया जाता है। यशपाल जी ने अपने उपन्यासों में पुरूष की इसी स्वार्थवृत्ति की ओर संकेत किया है तथा पति द्वारा पत्नी के शोषण की वृत्ति पर अनेक दृष्टिकोणों से विचार किया गया है जो नारी के जीवन के लिए घातक सिद्ध होता है। 'मनुष्य के रूप' में सुतलीवाला अपनी शारीरिक अक्षमता को जानता था कि वह नपुंसक है फिर भी अपनी वासना की पूर्ति तथा स्वार्थसिद्धी के लिए या केवल अपने सुख और चैन के लिए घर-गृहस्थी बसाना चाहता है। उसका कहना है - "विवाह बुढ़ापे की बढ़ती चली आती संध्या के लिए एक घर बसाने की योजना थी।"[155]

मनोरमा शिक्षित लड़की थी, बड़े साहस से उसने गृहस्थी में प्रवेश किया था, परन्तु जल्दी ही उसका सारा साहस तथा उमंगें नष्ट हो जाती हैं। यहाँ तक कि मनोरमा की सहज इच्छा को भी वह दबाकर रखना चाहता था जो कि विवाहिता स्त्री के लिए एक अस्वाभाविक-सी बात है।

इस पुरूष की स्वार्थवृत्ति का अन्त यहीं तक नहीं होता बल्कि वह धन के लालच में अपनी स्त्री का सौदा तय कर देता है। मनोरमा सुतलीवाला की शारीरिक अक्षमता को भी शायद सह लेती, किन्तु सुतलीवाला ने जब अर्थ लाभ के लिए उसे व्यभिचार के पथ पर ढकेलना चाहा, वह उसके लिए असहनीय था। वह पार्टी के बहाने घर से शाम के समय मनोरमा को बुला लेता है और उसे सेठ बदानिया के पास होटल में अकेला छोड़कर मधु नाक युवती को छोड़ने जाने

---

155 यशपाल - मनुष्य के रूप, पृ. 197

के बहाने बाहर आ जाता है। लेकिन मनोरमा अपनी तीक्ष्ण बुद्धि के बल से पति के नीच विचारों को भाँप जाती है और सदाचारिणी नारी की भाँति घर लौट आती है तथा अपनी मनोव्यथा इन शब्दों में व्यक्त करती है – "मैं नहीं समझती थी, कोई आदमी रूपये के लिए इतना गिर सकता है।"[156]

पति की इस शोषण वृत्ति के कारण मनोरमा का जीवन नरक बन जाता है। इन सबके अतिरिक्त उस पर लांछन भी लगाया गया – "तुम मेरी कोई बात सहन नहीं कर सकती तो साथ रहने का फायदा क्या है? ..... या यह तरीका था अपने दोस्तों से मिलने के लिए बम्बई आने का?"[157] यहाँ दोस्तों से तात्पर्य भूषण से है।

अपनी पत्नी पर इस प्रकार का लांछन लगाने का केवल एक ही कारण था, उससे छुटकारा पाना जो कि स्त्री के प्रति सरासर अन्याय है। इतना सब कुछ हो जाने बाद अन्य नारियों की तरह वह उसी घर में बैठकर अपने भाग्य को नहीं कोसती रही बल्कि उसने तलाक लेकर कम्युनिस्ट पार्टी में काम करना शुरू कर दिया।

वस्तुतः पुरूष प्रधान समाज में नारी सदियों से उपेक्षित रही। आर्थिक परावलंबन का अभिशाप वह निरंतर झेलती रही। पुरूष ने नैतिकता और सामाजिक मर्यादा का सारा दायित्व जैसे उसी के कंधे पर रख दिया था। आधुनिक युग में सामाजिक सुधारों और नव शिक्षा के फलस्वरूप उसे पहली बार अपने स्वतंत्र अस्तित्व का बोध हुआ। विवाह के क्षेत्र में उसने बाह्य दबावों के सामने समर्पण करने से इंकार किया और विवाह को स्वछंद प्रेम संबंध की परिणति माना। 'हिन्दू कोड बिल' और उत्तराधिकार कानून इन हेरीटेंस लॉ ने भी स्त्री-पुरूष के वर्गीय भेद को समाप्त किया है। आज नारी के सामने पुरूष की तरह ही वैवाहिक जीवन की विसंगतियों से मुक्ति पाने के लिए तलाक का मार्ग खुला हुआ है। उच्च शिक्षा ग्रहण कर नारी राजनीति, सामाजिक एवं साहित्यिक क्षेत्रों में अग्रसर हुई है।

---

156 यशपाल – मनुष्य के रूप, पृ. 223

157 यशपाल – मनुष्य के रूप, पृ. 224

निष्कर्ष –

यशपाल जी ने अपने उपन्यासों में नारी के पारिवारिक जीवन को भी उभारा है क्योंकि नारी जीवन पारिवारिक समस्याओं से भी उलझा हुआ है।

पारिवारिक जीवन की विभिन्न स्थितियों में से मुख्य है संयुक्त परिवार की स्थिति, लेकिन आज के संघर्षमय जीवन ने इस समस्या को भी सुलझा दिया है। यशपाल के कुछ उपन्यासों में संयुक्त परिवार का विकृत रूप दृष्टिगोचर होता है, लेकिन आधुनिक काल में संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। इच्छा से या अनिच्छा से विभक्त परिवार ही बन रहे हैं।

आधुनिक समाज की एक बड़ी ज्वलंत समस्या है कुमारी माता की समस्या। किसी भी कुमारी माता तथा अवैध संतान को समाज देख नहीं सकता, लेकिन वह किन परिस्थितियों में इसका शिकार हुई, इस ओर ध्यान न दिया जाकर उसके जीवन को दयनीय बना दिया जाता है। यशपाल जी ने इस समस्या की ओर ध्यान दिया है कि कुँआरी लड़की को गर्भ ठहरने पर गर्भपात करवा लेना चाहिए जिससे समाज में उसकी तथा उसके बच्चे की दुर्गति न हो। किन्तु यशपाल उन्मुक्त काम को बुरा नहीं मानते जिसका चित्रण यशपाल ने 'क्यों फँसे' में किया है।

यशपाल जी ने प्रौढ़ कुमारियों के संबंध में भी अपने उपन्यासों में चर्चा की है। उनके विचार में सही आयु में जब लड़कियाँ विवाह को टालती हैं तो बाद में विवाह के लिए उन्हें तरसना पड़ता है। 'झूठा सच' में श्यामा की यही हालत है।

परित्यकता या अपहृत स्त्रियों की स्थिति देश विभाजन के समय बड़ी विकट रही है। इस समस्या पर यशपाल जी ने अपने उपन्यास 'झूठा सच' में ध्यान दिया है। परित्यकता नारी का उसी के घर में स्वागत नहीं किया जाता तथा अगर एक बार नारी का अपहरण हो जाता है तो उसे सदा के लिए घर से बाहर निकाल दिया जाता है, चाहे वह निर्दोष ही क्यों न हो। नारी की इस स्थिति का भी यशपाल जी ने सजीव चित्रण किया है।

समाज में ये पारिवारिक परिस्थितियाँ इसलिए उत्पन्न होती हैं क्योंकि स्त्री-पुरूष के मध्य पारस्परिक दम्य पाया जाता है। अभी भी पुरूष स्त्री से अपने आपको कई गुना महान समझता है। स्त्री-पुरूष में विषमता की भावना पैदा होने का मुख्य कारण नारी की पराधीनता है। सदियों से स्त्री विषयक पुरूष का अनुदान दृष्टिकोण रहा है। यशपाल 'मनुष्य के रूप' में सुतलीवाला द्वारा मनोरमा के साथ किये गये व्यवहार द्वारा यह स्पष्ट करते हैं कि नारी के प्रति पुरूष का दृष्टिकोण कितना अनुदार रहा है। पढ़ी-लिखी नारी मनोरमा भी धोखा खा गई।

यशपाल जी ने अपने उपन्यासों में विधवा नारी पर होते हुए अत्याचारों को दिखाया है। मध्यम श्रेणी के परिवार की नारी पुनर्विवाह के लिए आगे कदम भी नहीं बढ़ा सकती और न ही उनके जीवन में आत्मनिर्भर बनने की सम्भावना होती है। इस कारण वह समाज तथा परिवार की ओर से पीड़ित रहती है।

भारतीय समाज में अभी भी विधवा समस्या अपना विकट रूप धारण किए हुए है। यशपाल जी ने भी मध्यम श्रेणी की विधवा नारियों का चित्रण किया है। 'मनुष्य के रूप' की सोमा घर से भाग जाती है और पुनर्विवाह के लिए तड़फड़ाती है तथा अपने पैरों पर खड़े होने के उपरान्त भी सुतलीवाला के साथ विवाह करने के लिए तैयार हो जाती है।

'देशद्रोही' की राज भी पुनर्विवाह कर लेती है। दूसरी ओर 'मेरी तेरी उसकी बात' की गौरी पुनर्विवाह नहीं करती, वह पढ़ना चाहती है और पढ़ी लिखी उषा अपने बच्चे की खातिर पुनर्विवाह नहीं करना चाहती।

निष्कर्षत: यशपाल जी ने स्त्री के पारिवारिक जीवन की विभिन्न परिस्थितियों एवं समस्याओं का अपने उपन्यासों में बखूबी चित्रण किया है।